प्रथम संस्करण, १९४७

प्रकाशक
किताब महल, ५६-ए जीरो रोड इलाहाबाद।
मुद्रक
शान्ति नारायण मालवीय
सेन्ट्रल प्रिंटिंग प्रेस, ८०, गुरुद्वारा रोड इलाहाबाद।

अपने चाचाजी
पं० ईश्वरीदत्त पांथरी
को

विषय-सूची

आमुख

इस छोटी-सी पुस्तक में संगृहीत लेख इटालियन यात्री निकोलो मनुकि की पुस्तक 'स्टोरिया डी मोगोर' के आधार पर लिखे गये हैं। इसलिए मैं समझता हूँ यहाँ पर संक्षेप में मनुकि का जीवन वृत्तांत दे दूँ।

निकोलो मनुकि वेनिस का रहने वाला था। वह एक बहुत ही साहसी व्यक्ति था। केवल १४ वर्ष की उम्र में वेनिस छोड़कर ई० सन् १६५३ में वह दुनिया का प्रत्यक्ष अनुभव करने के लिये निकल पड़ा। किसी तरह स्मर्ना, एशिया माइनर, परशिया, इस्फहान आदि होता हुआ वह जनवरी १६५६ में हिन्दुस्तान के पश्चिमी तट के नगर सूरत में आ पहुँचा। वहाँ से वह अप्रैल में फिर बुरहानपुर, नावार, ग्वालियर और धौलपुर होता हुआ आगरा आया और वहाँ से दिल्ली के मुग़ल दरबार में पहुँचा।

दिल्ली में आने पर वह दारा की फौज़ में ८० रुपये माहवार पर बन्दूकची की हैसियत से काम करने लगा। सामूगढ़ (१६५८ जून ८) के युद्ध में मनुकि भी दारा के पक्ष में लड़ा था। दारा शिकोह का भी वह कुछ समय लाहौर में साथ देता रहा। बाद में दारा और दारा के बेटे की हार होने पर उसने औरङ्गजेब के मित्र अम्बर के राजा जयसिंह के यहाँ नौकरी कर ली। जयसिंह जब बीजापुर पर आक्रमण करने गया तो मनुकि भी साथ था (१६६५ जुलाई)। इसके बाद नौकरी से तङ्ग आकर उसने इस्तीफ़ा दे दिया।

दक्षिण से फिर वह बेसिन चला गया (१६६७)। वहाँ से गोआ होता हुआ फिर आगरा और दिल्ली आया। दिल्ली में उसने फिर जयसिंह के लड़के कीरतसिंह के यहाँ नौकरी कर ली। इसी प्रकार कभी नौकरी करता हुआ और कभी डाक्टरी का काम करता हुआ वह लगभग १७१२ तक हिन्दुस्तान के कोने-कोने का चक्कर लगाता रहा। अन्त में सन् १७१२ के लगभग मद्रास अथवा पांडिचेरी में उसकी मृत्यु हो गई।

मनुकिने अपने इस प्रवास काल में मुग़ल हिन्दुस्तान का (औरङ्ग-जेव के शासन-काल तक का) विस्तृत इतिहास लिखा है। यह इतिहास की पुस्तक स्टोरिया डो मोगोर (Storia Do Mogor) नाम से प्रसिद्ध है। 'स्टोरिया' चार भागों में लिखी गई है।

पहले भाग में लेखक ने 'वेनिस से दिल्ली' तक की अपनी यात्रा का विवरण, और तैमूर से लेकर औरङ्गजेब के सिंहासनारूढ़ होने तक के मुग़ल बादशाहों का संक्षिप्त विवरण दिया है।

दूसरे भाग में प्रमुखतः 'औरङ्गजेब के शासन-काल' (१६५८-१७००) का ज़िक्र किया गया है।

तीसरे भाग में प्रमुखतः मुग़ल-दरबार और शासन-पद्धति के विवरण के साथ हिन्दू राज्यों और तत्कालीन सामाजिक अवस्था आदि पर प्रकाश डाला गया है।

चौथे भाग में प्रमुखतः मुग़ल शिविर (Mughal Camp) (१७०१) की मुख्य घटनाओं तथा जेसुएट और क्रिश्चियनों के झगड़ों आदि का वर्णन किया गया है।

पाँचवें भाग में चौथे भाग के अवशिष्टांश को पूरा किया गया है।

'स्टोरिया' इतिहास के विद्यार्थियों के बहुत काम की चीज़ है। १७वीं सदी के अन्तिम और १८वीं सदी के प्रारम्भकालीन भारत की अवस्था पर इससे बहुत अच्छा प्रकाश पड़ता है। मुझे आशा है विद्यार्थियों को इससे मुग़ल काल के इतिहास जानने में अवश्य कुछ सहायता मिल सकेगी।

अन्त में मैं अपने विद्यार्थी मित्रों श्री सुर्थाल, श्री रत्नेश्वर को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने प्रेस कापी तैयार करने में मुझे मदद दी।

भगवती प्रसाद पान्थरी

१

मुगल सम्राट् शाहजहाँ के अन्तिम दिवस

राजकुमार खुर्रम (बादशाह शाहजहाँ) ने जब अपनी महत्वाकांक्षा से पीड़ित होकर अपने पिता बादशाह जहाँगीर के विरुद्ध असंयत् विद्रोह कर उसे पीड़ा पहुँचाई और अनैतिकता के साथ फरवरी १६२८ में दिल्ली का मुगल तख्त हासिल किया, तो उसे मालूम न था कि वह अपनी आने वाली सन्तान के लिए उस अनैतिक वृक्ष के बीज को बो रहा है, जिसके कड़वे और तीखे फलों को उसे स्वयं चबाना पड़ेगा। शाहजहाँ के अप्राकृतिक और अनैतिक व्यवहारों से दुखी होकर जहाँगीर के हृदय का वह स्नेह जो शाहजहाँ के प्रति उसके विद्रोह करने के पूर्व था जलकर खाक हो गया।

दुःखी पिता ने इसीलिए कहा था कि "शाहजहाँ उन सब कृपाओं और आशीर्वादों के अयोग्य है जो मैंने उस पर निछावर की थीं।" जहाँगीर ने शाहजहाँ को कन्दहार के विद्रोही प्रान्त को विजित करने की आज्ञा दी थी, किन्तु उसने आज्ञा का उल्लंघन कर 'गृहयुद्ध' की विभीषिका उत्पन्न कर दी जिस कारण कई योग्य मुगल अधिकारी और सामन्तों का नाश हुआ, और कन्दहार के विजित करने का प्रयास कुछ समय के लिए रुक गया। इसीलिए जहाँगीर ने कहा था कि "शाहजहाँ ने अपने ही हाथों अपने साम्राज्य के पैरों पर कुल्हाड़ी चलायी और कन्दहार-विजय के मार्ग में रोड़ा अटकाया।"

अचानक रोग का आक्रमण

ये ही कारण हैं कि जहाँगीर ने अपनी कृपा और वरद्हस्त शाहजहाँ के मस्तक पर से हटा लिये और फलतः उसे जैसा कि उसके जीवन

के आखिरी दिनों से पता चलता है अपने पिता की संतप्त आत्मा की बद्दुआओं का भीषण शिकार होना पड़ा।

६ सितम्बर १६५७ को एकाएक सम्राट् शाहजहाँ बीमार पड़ा। सम्राट् के बिस्तर पर पड़ते ही उसके चारों लड़कों में तख्त पाने की उतप्त अभिलाषा जाग उठी। दिसम्बर में मुराद (सबसे छोटा लड़का) ने अपने को बादशाह घोषित कर दिया और इसी प्रकार शुजा ने भी बङ्गाल में अपने बादशाह होने का ऐलान किया। चालाक औरङ्गजेब ने मुराद को बादशाह होने में सहायता देने का वचन दिया। इस प्रकार औरङ्गजेब ने मुराद के साथ मिलकर तथा दक्षिण के बलिष्ठ शाही सामन्त मीर जुमला को भी अपनी ओर कर आगरा के मुगल तख्त को हथियाने के लिये अप्रैल १६५८ में पूरी तैयारी के साथ नर्मदा को पार किया।

विद्रोहियों की सफलता

शाहजहाँ पसोपेश में था। उसका प्यारा बेटा और वास्तविक उत्तराधिकारी दारा शिकोह उसके पास था। उसने बागी छोकरों को आगरे की ओर बढ़ता देख दारा के अधीन ३५,००० शाही सेना उन्हें दबाने को भेजी, किन्तु जहाँगीर की बद्दुआओं ने काम किया और धरमत के युद्ध में १५ अप्रैल १६५८ को शाही सेना बागियों द्वारा बुरी तरह से हरा दी गई! गृहयुद्ध की यह पहिली लड़ाई थी जिसमें शाहजहाँ और दारा की बहुत बुरी हार हुई, और परिणाम-स्वरूप औरङ्गजेब की ताकत शाही ताकत के मुकाबले पर पहुँच गई।

गृहयुद्ध की निर्णायक लड़ाई आगरे ही के पास सामूगढ़ में लड़ी गई थी (२९ मई १६५८)। इस युद्ध में दारा के नेतृत्व में ५०,००० शाही सेना ने भाग लिया था, किन्तु गद्दारों के कपटाचरण और बुरी हिकमत ने शाही पक्ष की जीत न होने दी। दारा के इस युद्ध में १०,००० सैनिक काम आये। इस युद्ध की हार ने दारा का ठिकाना [illegible] गया और उसे बागियों से अपने जीवन को बचाने के लिए

घर छोड़कर भाग जाना पड़ा।

पुत्र द्वारा पिता बन्दी

औरङ्गजेब अब विजेता के रूप में मुग़ल राजनगरी में प्रविष्ट हुआ, और किले में पैर रखते ही सबसे पहले उसने अपने पिता शाहजहाँ को, जिसे वह अपना सबसे बड़ा शत्रु मानने लगा था, कैद किया। इस प्रकार शाहजहाँ के अन्तिम दिनों की कहानी जून १६५८ ही से प्रारम्भ होती है, जिस दिन वह अपने ही बेटे के द्वारा कारावासित किया गया था। यह दर्दभरी कहानी बहुत लम्बी है।

औरङ्गजेब द्वारा भाइयों की हत्या

शाहजहाँ के कारावास जीवन का उल्लेख करने से पूर्व इतना बतला दिया जाय कि औरङ्गजेब ने ३० अगस्त १६५९ को दारा को कत्ल करवाया, और मुराद को जिसे वह तख्त में बैठाना चाहता था ग्वालियर के किले में बन्द रक्खा। मूर्ख मुराद दिसम्बर १६६१ तक ग्वालियर के किले में पीड़ित होता रहा और अन्त में उसे कत्ल करवा दिया गया।

तीसरा भाई शुजा औरङ्गजेब के भय से बंगाल छोड़कर आराकान की ओर भाग खड़ा हुआ, जहाँ वह सम्भवतया १६६१ में मगों द्वारा मार डाला गया। दारा का बदनसीब लड़का सुलेमान भी अपने चाचा मुराद की भाँति ग्वालियर के किले में कत्ल करवा दिया गया। इस प्रकार भाइयों और भतीजे के खून से हाथ रंगकर औरङ्गजेब 'आलमगीर' के नाम से दिल्ली के तख्त पर बैठकर शासन करने लगा।

भाइयों और भतीजे आदि की हत्याओं से परितुष्ट न होकर औरङ्गजेब ने अपने पैदा करने वाले और दुनिया की रोशनी दिखाने वाले पिता शाहजहाँ के अन्तिम दिनों को किस प्रकार यातना और वेदना से परिपूर्ण रक्खा, यह इटालियन यात्री मनुक्कि के करुणापूर्ण वृत्तान्त से प्रकट है।

शाहजहाँ की भर्त्सना

मनुक्कि ने बतलाया है कि तख्त पर आने के समय से औरङ्गजेब

के आखिरी दिनों से पता चलता है अपने पिता की संतप्त आत्मा की बद्दुआओं का भीषण शिकार होना पड़ा।

६ सितम्बर १६५७ को एकाएक सम्राट् शाहजहाँ बीमार पड़ा। सम्राट् के बिस्तर पर पड़ते ही उसके चारों लड़कों में तख़्त पाने की उत्तत अभिलाषा जाग उठी। दिसम्बर में मुराद (सबसे छोटा लड़का) ने अपने को बादशाह घोषित कर दिया और इसी प्रकार शुजा ने भी बङ्गाल में अपने बादशाह होने का ऐलान किया। चालाक औरङ्गजेब ने मुराद को बादशाह होने में सहायता देने का वचन दिया। इस प्रकार औरङ्गजेब ने मुराद के साथ मिलकर तथा दक्षिण के बलिष्ठ शाही सामन्त मीर जुमला को भी अपनी ओर कर आगरा के मुगल तख्त को हथियाने के लिये अप्रैल १६५८ में पूरी तैयारी के साथ नर्मदा को पार किया।

विद्रोहियों की सफलता

शाहजहाँ पसोपेश में था। उसका प्यारा बेटा और वास्तविक उत्तराधिकारी दारा शिकोह उसके पास था। उसने बागी छोकरों को आगरे की ओर बढ़ता देख दारा के अधीन ३५००० शाही सेना उन्हें दबाने को भेजी, किन्तु जहाँगीर की बददुआओं ने काम किया और धरमत के युद्ध में १५ अप्रैल १६५८ को शाही सेना बागियों द्वारा बुरी तरह से हरा दी गई! गृहयुद्ध की यह पहिली लड़ाई थी जिसमें शाहजहाँ और दारा की बहुत बुरी हार हुई, और परिणाम-स्वरूप औरङ्गजेब की ताकत शाही ताकत के मुकाबले पर पहुँच गई।

गृहयुद्ध की निर्णायक लड़ाई आगरे ही के पास सामूगढ़ में लड़ी गई थी (२९ मई १६५८)। इस युद्ध में दारा के नेतृत्व में ५०,००० शाही सेना ने भाग लिया था, किन्तु गद्दारों के कपटाचरण और बुरी किस्मत ने शाही पक्ष की जीत न होने दी। दारा के इस युद्ध में १०,००० सैनिक काम आये। इस युद्ध की हार से दारा का ठिकाना तक जाता रहा और उसे बागियों से अपने जीवन को बचाने के लिए

घर छोड़कर भाग जाना पड़ा।

पुत्र द्वारा पिता बन्दी

औरङ्गजेब अब विजेता के रूप में मुग़ल राजनगरी में प्रविष्ट हुआ, और किले में पैर रखते ही सबसे पहले उसने अपने पिता शाहजहाँ को, जिसे वह अपना सबसे बड़ा शत्रु मानने लगा था, कैद किया। इस प्रकार शाहजहाँ के अन्तिम दिनों की कहानी जून १६५८ ही से प्रारम्भ होती है, जिस दिन वह अपने ही बेटे के द्वारा कारावासित किया गया था। यह दर्दभरी कहानी बहुत लम्बी है।

औरङ्गजेब द्वारा भाइयों की हत्या

शाहजहाँ के कारावास जीवन का उल्लेख करने से पूर्व इतना बतला दिया जाय कि औरङ्गजेब ने ३० अगस्त १६५९ को दारा को कत्ल करवाया, और मुराद को जिसे वह तख़्त में बैटाना चाहता था ग्वालियर के किले में बन्द रक्खा। मूर्ख मुराद दिसम्बर १६६१ तक ग्वालियर के किले में पीड़ित होता रहा और अन्त में उसे कत्ल करवा दिया गया।

तीसरा भाई शुजा औरङ्गजेब के भय से बंगाल छोड़कर आराकान की ओर भाग खड़ा हुआ, जहाँ वह सम्भवतया १६६१ में मगों द्वारा मार डाला गया। दारा का बदनसीब लड़का सुलेमान भी अपने चाचा मुराद की भाँति ग्वालियर के किले में कत्ल करवा दिया गया। इस प्रकार भाइयों और भतीजे के खून से हाथ रंगकर औरङ्गजेब 'आलमगीर' के नाम से दिल्ली के तख़्त पर बैठकर शासन करने लगा।

भाइयों और भतीजे आदि की हत्याओं से परितुष्ट न होकर औरङ्ग-जेब ने अपने पैदा करने वाले और दुनिया की रोशनी दिखाने वाले पिता शाहजहाँ के अन्तिम दिनों को किस प्रकार यातना और वेदना से परिपूर्ण रक्खा, यह इटालियन यात्री मनुक्कि के करुणापूर्ण वृत्तान्त से प्रकट है।

शाहजहाँ की भर्त्सना

मनुक्कि ने बतलाया है कि तख़्त पर आने के समय से औरङ्गजेब

ने इस बात का विशेष ध्यान रक्खा कि जिस तरह हो सके पिता की भर्त्सना और अपमान किया जाय और उसका अच्छा नाम मिटा दिया जाय। औरङ्गजेब ने, इटालियन यात्री लिखता है, "इस बात के लिए पूरी कोशिश की जिससे सरदारवर्ग उसकी प्रशंसा और उसके पिता की निन्दा किया करें।"

कोप और यातना

औरङ्गजेब इतने ही से सन्तुष्ट न हुआ, उसने शाहजहाँ के मन को कुपित करने और कारावास को और भी नारकीय बनाने के लिये, ऐसी चिट्ठियाँ लिखीं जिनमें बन्दी बादशाह के शासन-काल की हर एक बातों की निन्दा की गई थी। उसने अपने पत्रों में शाहजहाँ पर "जनता के प्रति अन्याय, मंत्रियों के प्रति उदासीनता, पर-स्त्रियों के प्रति दुराचरण और स्त्रियों का मीना बाजार लगाने तथा लम्पटता के साथ महल में एक नर्तकी वैश्या को रखने के दोष लगाये थे। और इन्हीं पत्रों में दूसरी तरफ़ उसने अपने सम्पूर्ण कार्यों की श्रेष्ठता और विशालता का बखान किया था।

शाहजहाँ का उत्तर

औरङ्गजेब के घातक पत्रों का शाहजहाँ बिना उत्तर दिये न रहा। उसने, मनुक्कि लिखता है, औरङ्गजेब की भर्त्सना करते हुए, कई उलाहनों के साथ, यह लिखा था कि "वह आदमी, जिसने अपने पिता से द्रोह किया, भाइयों के साथ नृशंसता दिखलायी और इतना खून किया कि अपने लड़कों को भी न छोड़ा, कभी दूसरों के लिए हितकारक काम नहीं कर सकता। रोजाना दरबार में घंटों बैठे रहने के लिए अपनी प्रशंसा करना व्यर्थ है; यह तो इस बात का द्योतक है कि राज्य का शासन ठीक तरह से नहीं होता। क्योंकि जिस समय वह (शाहजहाँ) बादशाह था उसके कर्मचारी निर्भीक रहा करते थे, और रोजाना डंके की चोट से अन्याय करने वालों के विरुद्ध बादशाह के पास फरियादियों को फरियाद पहुँचाने की स्वतंत्रता दिये जाने पर भी

कभी कोई महीनों तक शिकायत लेकर उसके पास न पहुँचा।"

पत्रों में इस प्रकार का झगड़ा बाप-बेटों में काफी समय तक चलता रहा। आखिर शाहजहाँ ने तंग आकर रोष भरे शब्दों में औरङ्गजेब को लिखा कि "उसे इतना स्मरण रखना चाहिये कि आखिरकार वह जो कुछ है उसे उसने जबरन उस शख्स से हासिल किया है जिसने उसे जीवन दिया था।"

शाहजहाँ के इन प्रत्युत्तरों का औरङ्गजेब पर भी प्रभाव पड़े बिना न रहा। मनुकि लिखता है, शाहजहाँ के प्रत्युत्तरों के फल से "औरङ्गजेब नर्म होता गया और पिता के प्रति अधिक सहिष्णुता दिखाने लगा। अतः आगे के पत्रों में उसने पिता को सांत्वना देने का प्रयत्न किया, और बन्दी बादशाह को वांछित नजरें भी भिजवाईं (जैसे कुश्ती लड़ने वाले पहलवान और गायक) जिससे कारागार की मलिनता कुछ कम हो सके।"

शाही जवाहरात

किन्तु औरङ्गजेब का यह सौहार्द भी एक अभिनय था। अपने को पितृभक्त प्रदर्शितकर वह असल में शाहजहाँ के निजी खजाने के जवाहरातों को लूटने के फेर में था। लेकिन जब उसने बड़ी मृदुलता के साथ अपने पिता से जवाहरातों की माँग पेश की, तो शाहजहाँ ने, मनुकि कहता है, एक सख्त चिट्ठी औरङ्गजेब को लिखी जिसमें कहा गया था कि "यदि फिर कभी उस (औरङ्गजेब) ने ऐसी बातें लिखीं तो उसके (शाहजहाँ) पास जो धान का मूसल रक्खा है उससे वह जवाहरातों को चूर-चूर कर डालेगा और फलतः नष्टकर दिये जाने से पहले औरङ्गजेब जवाहरातों को न पा सकेगा।"

कहते हैं इसके बाद फिर कभी औरङ्गजेब जवाहरातों को माँगने की हिम्मत न कर सका, लेकिन वह बिना इसके पता लगाये भी न रह सका कि शाहजहाँ के जवाहरातों की संख्या कितनी है? इस प्रयोजन के लिये उसने, मनुकि लिखता है, "शाही जौहरियों को

नियुक्त किया। फौलादखाँ ने संख्या की गणना करने के लिए समय माँगा, और ६ महीने बाद उत्तर लिख भेजा कि उनकी परिगणना करने और कीमत का पता लगाने के लिए कम से कम १४ वर्ष का समय चाहिये।" इस उत्तर को पाकर औरङ्गजेब ने इतना समय बर्बाद करना उचित न समझकर, अपनी इच्छा का ही परित्याग कर दिया।

शाहजहाँ की हत्या के प्रयत्न

औरङ्गजेब एक समय बहुत बीमार पड़ा। कुछ दिन बाद जब वह अच्छा हो गया तो शाही वैद्यों ने उसे स्वास्थ्य लाभ के हित काश्मीर जाने की सलाह दी। औरङ्गजेब वायु परिवर्तन के लिए काश्मीर जाने को राजी तो हुआ, किन्तु शाहजहाँ का बन्दी-रूप में किले में जीवित पड़ा रहना उसे बहुत खटकने लगा।

शाहजहाँ का अस्तित्व, मनुक्चि लिखता है, उसके हृदय में शूल की तरह चुभ रहा था और उसे आराम लेने या तबियत को बहलाने से रोक रहा था। अपने को सुखी बनाने के खातिर वह शाहजहाँ-रूपी काँटे को कुचल डालना चाहता था। अतः उसने अब अपने पिता के प्रति मृदुता दिखाना बन्द कर दिया और वृद्ध बाप को अधिकाधिक यातना पहुँचाने का यत्न करने लगा जिससे उस (पिता) का शीघ्र ही अन्त हो जाय।

शाहजहाँ को पीड़ित करने के लिए औरङ्गजेब ने किले की उस खिड़की को बन्द करवा दिया जिसके पास बैठकर शाहजहाँ नदी की ओर देखकर मन बहलाया करता था। बन्दूकचियों की एक टुकड़ी को हुक्म दिया गया कि वे आगरा महल के पास चाँदमारीकर वृद्ध शाहजहाँ को तङ्ग किया करें, और यदि वह खिड़की पर दिखलाई पड़े तो गोली से मार डालें! इसके साथ ही शाहजहाँ के उद्वेग को बढ़ाने के लिए उसके खजाने के बहुत से सुवर्ण और चाँदी के सिक्कों को शोरगुल के साथ लूटकर ले जाया गया जिससे वह (शाहजहाँ) इन हरकतों को जाने

और निराश हो उठे किन्तु ये सब तरकीबें बेकार गईं क्योंकि मनुक्कि लिखता है, "शाहजहाँ ने भी बड़ी होशियारी से इन हरकतों का सामना किया, उसने यह प्रकट किया मानों वह कुछ नहीं देख रहा है और बन्दूकचियों एवं लुटेरों के शोर-गुल आदि के प्रति बेखबर-सा हो, वह गाने-बजाने, नाचने और अपनी बेगमों व रखेलियों के साथ रङ्गरेली करते हुये मस्त पड़ा रहा।"

शाहजहाँ के इस मस्त जीवन की इत्तला महल के रखवाले एतिबार खाँ ने जब औरङ्गजेब को भेजी तो उस पितृ-घातक ने, मनुक्कि लिखता है, "शाहजहाँ को विष देकर मारने का इरादा किया"। औरंगजेब ने अपने इरादे के अनुसार शाहजहाँ के वैद्य मुकर्रम खाँ के पास यह लिखकर विष भेजा कि 'यदि वह (वैद्य) जीवित रहना चाहता है तो काहिम द्वारा भेजा हुआ विष शाहजहाँ को दे दे और यदि उसने ऐसा न किया तो उसे स्वयं मरना पड़ेगा।' मुकर्रम खाँ ने औरंगजेब के नौकर काहिम से विष देना स्वीकार कर उसे लौटा दिया। किन्तु वह अपने मालिक के प्रति, जिससे उसने बहुत-सी प्रतिष्ठा और समृद्धि पाई थी, अकृतज्ञ न हो सका और इस कारण औरंगजेब के क्रोध से बचने के लिए उसने विष पीकर स्वयं अपनी वफादारी को अमर कर दिखलाया। इस घटना पर मनुक्कि लिखता है कि "औरंगजेब अपने पिता के अन्त की वांछित खबर की प्रतीक्षा कर रहा था परन्तु उसे मालूम हुआ कि शाहजहाँ के प्रति उस व्यक्ति ने अधिक सम्मान प्रदर्शित किया जिसने उस (शाहजहाँ) से थोड़ी-बहुत कृपालुता पाई थी बनिस्बत उसके जिसने उस (शाहजहाँ) से जीवन पाया था।" किन्तु इस बलिदान से भी औरंगजेब का मलिन हृदय न धुल सका और इस घटना के बाद भी वह शाहजहाँ को मारने की अनेक तरकीबें सोचता ही रहा। काश्मीर को जाते समय दिल्ली में उसने एक यूरोपियन डाक्टर को शाहजहाँ को विष देने के लिए तैयार करके भेजा था किन्तु शाहजहाँ को अपने षड्यंत्री बेटे की चालाकी का आभास हो गया और इसलिए उसने यूरोपियन

चिकित्सक की सेवा से इनकार कर दिया। इस प्रकार औरंगजेब का अपने पिता को विष देने का यह प्रयत्न भी बेकार ही गया।

शाहजहाँ का अन्त

कारावास के यातनामय जीवन को सुखी बनाने के लिए शाहजहाँ के पास सिवाय भोग-विलास के कोई दूसरा साधन न रह गया था। मनुक्कि लिखता है कि "अतिशय भोग-विलास के कारण उसका मूत्राशय बहुत कमज़ोर पड़ गया था जिससे पेशाब के रुक जाने से उसकी मृत्यु हो गई।"*

इतिबार खाँ ने जब शाहजहाँ के मरने की खबर औरंगजेब को भेजी तो उसे पूरी तरह यकीन न हो पाया कि शाहजहाँ सचमुच ही मर गया है। इसलिए उसने पहिले अपने एक विश्वासपात्र को यह हुक्म देकर आगरा भेजा कि 'वह जाकर शाहजहाँ के पैरों को गरम लोहे से स्पर्श करे, और यदि शव हिले-डुले नहीं तो खोपड़ी को भी चूर कर डाले जिससे यह तै हो जाय कि वह सचमुच मर गया है।' साथ ही औरङ्ग-जेब ने इतबार खाँ को भी यह लिख भेजा कि 'उसके आगरा पहुँचने तक शाहजहाँ के शव को दफनाया न जाय।' इसके बाद औरङ्गजेब पितृ-प्रेम का अभिनय करता हुआ तेजी के साथ नदी के मार्ग से आगरा की ओर बढ़ा; किन्तु इस तेजी का वास्तविक कारण था— "शाहजहाँ रूपी शूल से जल्दी से जल्दी मुक्ति पाना।"

पिता के प्रति असम्मान का व्यवहार

आगरा पहुँचने पर औरङ्गजेब ताजमहल में ठहरा और वहीं मृत शाहजहाँ के लाये जाने की इन्तजारी करता रहा। किले से बाहर जाते समय शाहजहाँ के शरीर को फाटक के बजाय दिवाल में बनाये गये एक छेद के द्वारा सिर की तरफ़ से बाहर निकाला गया। शाहजहाँ की [illegible]ारी बेटी जहाँनारा (बेगम साहब) ने दो हज़ार स्वर्ण मुहरें [illegible] [illegible]र बखेरने के लिए भेजीं, किन्तु महल के रक्षकों ने, यह कहते हुए [illegible]

*शाहजहाँ का देहान्त २६ जनवरी १६६६ को हुआ था।

'कैदी कुछ दान नहीं कर सकते', सारी मुद्रायें जब्त कर लीं। इस प्रकार क्रूर औरङ्गजेव मरने पर भी पिता का असम्मान करने में न हिचकिचाया।

ताजमहल में अर्थी के पहुँचने पर औरङ्गजेव ने मृत आत्मा के लिए खुदा से प्रार्थना की और पितृ-भक्ति का अभिनय करते हुए आँखें पोंछने लगा मानों रो रहा हो! लेकिन दिल में आज उसे पूर्ण शांति मालूम हो रही थी क्योंकि आज जनवरी १६६६ को वह अपने हाथों से उस पिता को कब्र में लिटा रहा था जिसकी वह कभी से मृत्यु चाह रहा था और जिसके जीवन का जल्दी अन्त करने के लिए उसने कई वार कई उपाय और यत्न किये थे।

२
औरङ्गजेब का फकीरी स्वाँग

औरङ्गजेब को सिवा एक (अकबर) के महान् मुगलों में महानतर कहा गया है, यद्यपि एक शासक और राजनीतिज्ञ के रूप में वह काफी असफल रहा है। शाहजहाँ का वह न्यायोचित उत्तराधिकारी न था। उसने तख्त पर ताकत और विशेषकर चालाकी से कब्जा किया था। उसने बहादुरी और छल से धारमत, सामुगढ़, देवराय और कन्हवा के युद्धों को जीता था। इन विजयों के परिणाम-स्वरूप जून १६५९ में अपने पिता को अलग कर वह निश्चित रूप से सिंहासन पर आसीन हुआ, और आलमगीर नाम से शासन करने लगा।

शक्ति का पुजारी और फिर भी फकीर

यद्यपि वह शक्ति और आकांक्षा का प्रबल पुजारी था, लेकिन अपने को हमेशा इस्लाम का फकीर मात्र बतलाया करता था। मुसलमान लेखकों ने भी उसे एक कट्टर धर्मी और 'धर्मरक्षक' बतलाया है। निःसन्देह वह एक महान् और उन्मादी मुस्लिम तथा मूर्त्तिध्वंसक था, किन्तु उसका फकीरी भेष और साधुता का बाना एक स्वाँग मात्र था।

इटली के यात्री मनुकि ने, जो औरङ्गजेब के समय में हिन्दुस्तान में था, कई ऐसी कहानियाँ दी हैं जिनसे औरङ्गजेब के फ़कीरी और साधुपन के स्वाँग पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

उसने लिखा है कि 'एक बिना सन्तान वाली विधवा जिसने सन्तान प्राप्ति के लिए अनेक चेष्टाएँ कीं किन्तु सफल न हो सकी। अन्त में उसने फकीर सम्राट् (औरङ्गजेब) को, सन्तान होने पर ५) रु० भेंट देने की मनौती कबूल की। उसकी मनौती निष्फल न गयी। अपेक्षित समय के अन्दर ही उसके गर्भ से एक बालक ने जन्म लिया। प्रसव की कमजोरी दूर होने के बाद समर्थ होने पर

वह स्त्री अपनी मनौती के अनुसार सम्राट् को भेंट देने के लिए दरबार की ओर चली। फाटक पर प्रहरियों ने उसको अन्दर जाने से रोक दिया। किन्तु यह खबर जब सम्राट् को मिली तो उसने एकदम उस स्त्री को अपने सामने हाज़िर करने की आज्ञा दी। स्त्री के आने पर बादशाह ने खुद भेंट को लेने की इच्छा प्रकट की। भेंट पाते ही सम्राट् ने उसे गरीबों में बाँट दिया। बादशाह के इस कार्य का दरबारियों और प्रजा-जनों के दिल पर अच्छा प्रभाव पड़ा और लोग उसे एक दानी वा साधु-पुरुष समझने लगे। मनुक्कि कहता है कि अपने दरबारियों और प्रजा की इस राय को अपने प्रति दृढ़ और कायम रखने के लिए, "उसने कभी ऐसे मौकों को हाथ से जाने नहीं दिया है, न जाने देता है, जो इस ध्येय को आगे बढ़ा सकते हैं।"

तश्तरी टूटने की घटना

इस प्रकार की एक घटना और है। एक दिन औरङ्गजेब की पत्नी उदयपुरी बेगम ने बादशाह को अपने हाथों से तैयार की हुई एक विशेष प्रकार की मिठाई खाने के लिए निमंत्रित किया। बादशाह निमन्त्रण को स्वीकार कर उसके महल में गया; किन्तु नौकरानी जब मिठाई की तश्तरी लेकर आ रही थी कि अचानक तश्तरी उसके हाथ से गिर पड़ी और टूट गई। बेगम क्रोध के मारे आपे से बाहर हो उठी। बादशाह ने यह देखकर अपनी आदतानुसार रानी के क्रोध को शांत करने के लिए बड़ी विनम्रता और कोमलता के साथ उसे समझाना शुरू किया। बड़ी प्रगल्भता के साथ उसने रानी से कहा, "ईश्वर की इच्छा ही से तश्तरी टूटी है। शायद मुझ जैसा पापी उस सुन्दर तश्तरी का उपभोग न कर सकता था।" बादशाह के इस तथा इसी प्रकार के अन्य कथनों से आखिर रानी का क्रोध जाता रहा।

रात को नमाज

अपने फकीरीपन को साबित करने की इच्छा से एक बार बादशाह रात ही को नमाज पढ़ने के लिए उठा। उसने एक नौकर को मुँह

धोने के लिए पानी लाने को कहा। ख्वाज़ा (नौकर) नींद में बेसुध होने से घबड़ा कर तेजी से उठा और अनजाने में बादशाह से जा टकराया। उसकी टक्कर लगने से बादशाह गिर पड़ा। यह देख ख्वाजा अत्यन्त भयभीत हो उठा और एक कोने में दुबक के मृत-आदमी के जैसा सिकुड़ कर बैठ गया। उसे इस प्रकार भयभीत और त्रस्त देखकर बादशाह उसके निकट गया और बड़े कोमल शब्दों में उसे समझाते हुए कहने लगा 'तुम क्यों अपने जैसे एक खुदा के बन्दे से डरते हो ? इस प्रकार की भीति तुम्हें केवल खुदा से करनी चाहिए, जिससे कि तुम उसे नाराज़ न करो। उठो और भय को छोड़ो।" निस्सन्देह इस घटना की चर्चा बाहर फैलने पर, लोगों को उसकी साधुता पर और अधिक विश्वास हो गया होगा।

नमाज पढ़ने जाने की घटना

एक और अवसर पर जब बादशाह मसजिद को जा रहा था तो एक अधिकारी ने देखा कि वह दरी जिस पर बादशाह को चलना है, एक जगह पर फटी हुई है। अतः उस अधिकारी ने उस फटी जगह को एक दूसरे कपड़े से ढक कर छिपा देने का यत्न किया। बादशाह ने यह देख लिया और निकट जाकर उस अधिकारी को यह कहते हुए आड़े हाथों से खबर ली कि "इस प्रकार की कोई भी सफाई यद्यपि दरबार के लिए अवश्य उपयुक्त है, किन्तु खुदा के मकान में यह अवांछनीय है क्योंकि यहाँ पर वह अपनी प्रजा के निम्न से निम्न व्यक्ति से किसी प्रकार बढ़कर नहीं है।"

कहते हैं बादशाह के इस व्यवहार से जनता में खूब वाहवाही फैली और लोगों को उसकी साधुता और पवित्रता में और विश्वास जम गया।

योगिक शक्ति पर विश्वास

बादशाह के फकीरीपन पर विश्वास पैदा करने वाली एक और घटना है। एक बार बादशाह के किसी मृत सिपहसालार की विधवा पत्नी ने आर्थिक कठिनाइयों से बाध्य होकर बादशाह के पास सहायता

के लिए प्रार्थना पत्र भेजा। बादशाह ने उसकी अर्जी पर ३००) रु० उसे दिए जाने की आज्ञा दी। किन्तु उक्त विधवा ने स्वीकृत रकम को यह कहकर लेने से इनकार कर दिया कि "उसके पति की सेवाओं को देखते हुए यह रकम बहुत तुच्छ है, साथ ही एक इतने बड़े महान् सम्राट् द्वारा इतनी तुच्छ रकम का दिया जाना उनकी प्रतिष्ठा के भी अनुकूल नहीं है।" यह जवाब पाकर बादशाह ने उसके सामने दो क़ागज रखवाये जिनमें एक पर हजार और दूसरे पर ३००) रु० की रकमें लिखी थीं। बादशाह ने तब उससे दोनों कागजों में से एक को चुनने को कहा। भाग्यवशात् विधवा के हाथ वही कागज आया जिस पर ३००) रु० की रकम लिखी थी इस पर बादशाह ने उससे कहा कि अब यह साबित हो गया है कि उसके भाग्य के लेखे के अनुसार ही उसे ३००) रु० दिया गया।

बादशाह की इस चाल ने लोगों को ऐसा प्रभावित किया कि लोग उसकी योगिक शक्ति पर विश्वास करने लगे।

विनम्रता

बादशाह की साधुता की भाँति उसकी विनम्रता भी एक अभिनय मात्र थी। मनुक्कि ने लिखा है कि एक समय एक सौदागर एक बहुत बढ़िया सोने के तारों से काम किया हुआ कोट जिस पर कुरान की कुछ आयतें भी बहुत सुन्दर तरीके से काढ़ी गई थीं, बादशाह के पास बेचने के लिए लाया। बादशाह कोट को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ, किन्तु कोट की भारी कीमत सुनने पर उसने बड़ी चतुरता से व्यापारी से कहा कि "उसने ऐसे कीमती वस्त्रों को कभी न पहिनने की प्रतिज्ञा कर ली है; साथ ही उसके जैसा पाजी पवित्र आयतों से युक्त कोट को अपने शरीर पर धारण करने की क्षमता भी नहीं रखता।" अपने आप को एक भारी पातकी कहने की उसकी कुशलता निस्सन्देह उसकी साधुता और सत्य-वादिता को बढ़ाने में सहायक हुई।

राजमहलों का जीवन (१)

वेनिस के यूरोपियन यात्री मनुकि ने औरङ्गजेब के समय का जो राज-
महल और उसके अन्दर में होने वाली घटनाओं का वर्णन किया
है, उससे मुगल बादशाहों के राजमहलों के जीवन पर बहुत प्रकाश
पड़ता है । नीचे उसी के आधार पर मुगल राजमहल और बादशाह
तथा बेगमों के जीवन आदि का उल्लेख किया जायगा ।

मुगल राजप्रासाद

राजमहल में करीब दो हजार स्त्रियाँ नौकर रखी जाती थीं । ये
स्त्रियाँ विभिन्न जातियों की होती थीं । प्रत्येक स्त्री को अलग-अलग काम
सुपुर्द होते थे । कोई बादशाह, कोई बेगमों तथा राजकुमारियों और
कोई रखेलियों के काम के लिये नियुक्त रहती थीं । रखेलियों
को अलग-अलग कमरे मिले होते थे और उनकी देख-रेख विशेष
रूप से नियुक्त प्रौढ़ा स्त्रियाँ करती थीं । उपरोक्त २००० स्त्रियों में से
प्रत्येक रखेली के लिए दस दासियाँ नियत रहती थीं ।

प्रौढ़ा स्त्रियों का वेतन

प्रौढ़ा-स्त्रियों को उनके पद के अनुसार तीन सौ, चार सौ या पाँच
सौ रुपया वेतन मिला करता था । उनके अधीन काम करने वाली
दासियों को ५० से २०० रुपये तक वेतन मिलता था ।

संगीत की निरीक्षिका

प्रौढ़ा स्त्रियों के अतिरिक्त संगीतज्ञ वा गायिका स्त्रियों के शासन के
लिये महिला संगीत निरीक्षिकाएँ भी नियुक्त रहती थीं जिनको प्रौढ़ा
स्त्रियों की भाँति ही तनख्वाहें मिलती थीं । तथा राजकुमार और राज-
कुमारियों से इन्हें भेंट भी मिला करती थी ।

शाहजादियों की शिक्षा-दीक्षा

इन संगीत निरीक्षिकाओं में कुछ ऐसी होती थीं जो राजकुमारियों या शाहजादियों को पढ़ाया करती थीं। ज्यादेतर 'कामशास्त्र' का अध्ययन ही लड़कियों को कराया जाता था। महल की स्त्रियाँ अधिकतर गुलिस्ताँ, वोस्ताँ, आदि प्रेम-काव्यों को पढ़कर मन वहलाया करती थीं। ये पुस्तकें मनुक्कि लिखता है 'वेशर्मियों' से भरी होती थीं।

बादशाह और स्त्री परिचारिकाएँ

जिस प्रकार दरवार में बादशाह के इर्द-गिर्द पुरुष परिचारक घिरे रहते थे, उसी प्रकार महल के अन्दर वह स्त्री परिचारिकाओं से घिरा रहता था।

स्त्रियों में से जो उच्च पद पर होती थीं, वे जब बादशाह महल से बाहर न जा सकता था तो बाहर अधिकारियों को शाही हुक्मनामें पहुँचाया करती थीं। इन पदों पर नियुक्त स्त्रियाँ बहुत छान-बीन के बाद रखी जाती थीं। वे बड़ी चतुर और कुशल होने के साथ साम्राज्य की सारी बातों से परिचित हुआ करती थीं। साम्राज्य की बातों से परिचित होने का कारण मनुक्कि ने यह दिया है—"बाहर से अधिकारी वर्ग लिखित रिपोर्टें महल में भेजा करते थे। इन रिपोर्टों का उत्तर बादशाह के निर्देशानुसार ये स्त्रियाँ ही लिखती थीं। रिपोर्ट का जवाब बाहर पहुँचाने और बाहर से मुहर बन्द पत्रों को अन्दर लाने का काम खोजों के सिपुर्द होता था।" स्पष्ट है कि जब रिपोर्ट का जवाब स्त्रियों से लिखाया जाता था तो उनका साम्राज्य के मामलों से अवगत होना स्वाभाविक ही था।

मनुक्कि ने यह भी लिखा है कि बाहर से साम्राज्य के वाकया-नवीस और खुफिया-नवीस जो पत्र बादशाह को महल में भेजते थे, वे पत्र रात को ९ बजे के करीब महल की स्त्रियाँ बादशाह को पढ़कर सुनाया करती थीं जिससे बादशाह साम्राज्य के समाचारों से परिचित रहा करता था। इनके अतिरिक्त कुछ विशेष गुप्तचरों को भी, हफ्तेवार

शाहजादों के कार्य आदि के बारे की लिखित रिपोर्ट भी महल में भेजनी पड़ती थी।" स्पष्ट है इन सब रिपोर्टों को स्त्रियाँ ही पढ़ कर सुनाती थीं और इसलिए वे साम्राज्य की घटनाओं से खुद भी परिचित हो जाती थीं।

बादशाह के सोने का समय

उपरोक्त रिपोर्ट को सुनने में बादशाह आधी रात तक का समय लगा देता था। इसके पश्चात् वह कुल तीन घंटे की नींद लेता था। नींद से जागने पर वह डेढ़ घंटे नमाज़ पढ़ता था।

४० दिन तक रोजा

मनुक्कि लिखता है कि प्रतिवर्ष औरङ्गजेब ४० दिन का व्रत या रोजा रखता था। इन दिनों में वह भूमि पर लेटता, उपवास करता तथा दान दिया करता था, जिससे उसे युद्ध में विजय और राजकीय योजनाओं में सफलता प्राप्त होती रहे। किन्तु मनुक्कि लिखता है— "परन्तु आजकल (शायद जब वह इन वृतान्तों को लिख रहा था) बूढ़ा हो जाने और शत्रुओं द्वारा उसकी योजनाओं को व्याघात पहुँचने से वह आराम लेने को लाचार कर दिया गया है। फिर भी वह हर सुबह उठकर विचार-पूर्वक हुक्म देने में किसी प्रकार चूकता नहीं है। अपने नियम के अनुसार वह २४ घंटों में एक बार खाता है, और तीन घंटों के लिए सोता है। सोते समय स्त्री परिचारिका में जो बहुत ही बहादुर और तीर आदि शस्त्र चलाने में निपुण होती हैं, उसके शरीर की रक्षा किया करती हैं।"

बादशाह का भोजन और भोजनालय

बादशाह के भोजनालय का रोजाना खर्च एक हजार रुपया था। इस रुपये से भोजनालय के अधिकारियों को सब जरूरी चीजें एकत्रित करनी पड़ती थीं। बादशाह के लिए कुछ विशेष प्रकार की चीजें हमेशा चीनी मिट्टी की तश्तरियों पर सोने की तिपाई में रख के परोस दी जाती थीं। बादशाह अपने लिए परोसे गये थालों में से कुछ उन

शाहजादियों और शाहजादों तथा उच्चाधिकारियों को भिजवा देता था, जिन पर उसकी विशेष कृपा होती थी। इस अनुग्रह से वे लोग इतना खुश होते थे कि वे बादशाह के दिये हुए थालों को पहुँचाने वाले खोजों को बहुत पुरस्कार दिया करते थे।

महल में रहते समय शाहजादा, शाहजादियों और बेगमों, सब के खर्च अलग-अलग बटे होते थे। किन्तु युद्ध के समय भोजनालय का खर्च तथा अन्य महल के बाशिन्दों का खर्च अनियमित रूप से हुआ करता था। युद्ध के समय भी बादशाह के लिए कुछ विशेष तश्तरियाँ अवश्य तैयार की जाती थीं।

मुगल बेगमों और शाहजादियों आदि की उपाधियाँ

मनुक्कि के अनुसार महल में बादशाह की तरफ से, सब को उपाधियाँ मिला करती थीं। उसने रानियों और शाहजादियों आदि की उपाधियों की एक बहुत लम्बी लिस्ट दी है, जिनमें से कुछ निम्न हैं 'ताजमहल' (महल की ताज या मुकुट); 'नूरमहल' (महल की रोशनी); 'नूरजहाँ' (संसार की रोशनी); 'अकबराबादी' (समृद्धि की अधिष्ठात्री); 'माहखानूम' (घर की चिराग); 'शाहखानूम' (घर की बादशाह), 'दुर्र-इ-दुर्रान बेगम' (शाहजादियों में मोती की जैसी) 'जहाँनारा बेगम' (संसार प्रसिद्ध शाहजादी); 'बेगम साहिबा' (शाहजादियों में साहिबा); रौशनारा बेगम (शाहजादियों में प्रकाश स्वरूपिणी), आदि।

रानियों और राजकुमारियों की उपाधि 'बेगम' का अर्थ है कि उन्हें कोई दुःख या गम नहीं है और वे हर प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त हैं। खानूम का अर्थ है कि वे शाही घराने की हैं, 'कुलीन' हैं। मनुक्कि लिखता है कि "जब वे हाथी की सवारी करना चाहती हैं तो पहले महल के पास लगे तम्बू में जाती हैं, और तब महावत कपड़े से ढके हुये हाथी को लेकर आता है, जिससे कि वह उनको सवारी करते हुए देखने न पावे।

रखेलियों की उपाधियाँ

रानियों की तरह रखेलियों की भी उपाधियाँ हुआ करती थीं। इन उपाधियों के कुछ नमूने इस प्रकार हैं— 'र' नह-दिल (स्वच्छ हृदय की) 'बादाम चश्म' (बड़ी-बड़ी आँखों वाली) 'सुखदेन' (सुख देने वाली), 'शृङ्गार' (सजी हुई); 'पियार' (प्यारी ; 'महान्' (स्वाभिमानी), आदि। इन नामों में सुखदेन, शृङ्गार, महान्, जैसे नाम शुद्ध संस्कृत के हैं। इससे मालूम होता है कि मुगल बड़े चाव से हिन्दू नामों का भी प्रयोग किया करते थे। मनुक्कि ने भी लिखा है कि मुग़लों के नाम बहुधा पारसी और हिन्दू उद्भव के हुआ करते हैं। हिन्दू नामों के पाए जाने का कारण संभवतया यह था कि अकबर के समय में मुगल बादशाह हिन्दू राजवंशों की लड़कियों से विवाह करने लगे थे, और इन हिन्दू बेगमों तथा उनकी दासियों के नामों को हिन्दू तरीके ही से पुकारने में वे आनन्द लेते थे।

प्रौढ़ा स्त्रियों की उपाधियाँ

इनकी उपाधियाँ निम्न प्रकार की थीं—'फहमिह बानो' (दार्शनिक महिला), 'फलाकि बानो' (सौभाग्यशाली महिला), 'नौशावह बानो' (मदिरा पान करने वाली); 'नसीम-तन बानो' (रजत वदन वाली नारी); 'नवलबाई बानो' (नूतनता भरी); 'मणिक बानो' (माणिक जैसी); आदि।

खूबसूरत लड़कियों का अपहरण

मनुक्कि के अनुसार प्रौढ़ा स्त्रियों से मुगल बादशाह गुप्तचरों का काम भी लेते थे। गुप्तचर के रूप में इन प्रौढ़ाओं को साम्राज्य में निवास करने वाली सौन्दर्य कुमारियों का पता लगाना पड़ता था। पता लगाने पर प्रौढ़ा स्त्रियाँ उन्हें फुसलाकर धोखे से उस स्थान को भगा ले जाती थीं जहाँ बादशाह या शाहज़ादे उनको लाने के लिए कह रखते थे। अपहृत की गई लड़कियाँ, यदि बादशाह को प्यारी लगीं और पसन्द आ गईं तो रखेली के रूप में महल में रख ली जाती थीं, लेकिन यदि बादशाह

नापसन्द कर उन्हें रखना नहीं चाहता था, तो वापस भेज दी जाती थीं।

मुगलों की ऐय्याशी और अनाचार का इससे अधिक प्रमाण और क्या हो सकता है! मुग़ल साम्राज्य के पतन में इस ऐय्याशी का कम हाथ नहीं रहा है।

गायिकाओं की अध्यक्षा स्त्रियाँ

औरंगजेब संगीत के कट्टर शत्रु के रूप में प्रसिद्ध है। किन्तु मनुक्कि ने लिखा है कि संगीत पर सब प्रकार के प्रतिबन्ध लगाने के बाद भी बेगमों और शाहजादियों के मन-बहलाव के लिए वह (औरंगजेब) महल में संगीत और नृत्य होने देता था, और उसके हित कई गायिकाओं और नर्तकियों को नियुक्त किया करता था। इन गायिकाओं को भी मान्य स्त्री अधिकारियों की भाँति विशेष उपाधियाँ मिला करती थीं, जैसे, 'सुन्दरबाई' (संगीताध्यक्ष); 'सुरीलबाई' (सुन्दर बोली वाली) 'मृगनैनी' (हिरण की सी आँखों वाली) 'रस-बाई' (मदिरा जैसी); 'नैन-जोत बाई' (नयनों की ज्योति वाली) 'चंचल-बाई' (चपला सी चपल गायिका); 'शानबाई'; 'अप्सरा बाई'; 'वैकुण्ठ बाई'; 'गुलाल बाई' (गुलाब जैसी); 'बासनाबाई'; 'केशर बाई' आदि। इनमें जो बहुधा हिन्दू नाम आए हैं इसका कारण इय था कि उनमें से अधिकतर गायिकाएँ हिन्दू कुलों की थीं, जिन्हें बचपन ही में उनके घरों से भगाकर राजमहल ले आया जाता था। इन हिन्दू लड़कियों को महल में लाने के बाद मुसलमान बना दिया जाता था।

ये ही गायिका स्त्रियाँ संगीत की अध्यक्षा बतायी जाती थीं। प्रत्येक अध्यक्षाओं के नीचे दस-दस संगीत सीखने वाली छात्राएँ रहती थीं, और इन सब का काम रानियों, राजकुमारियों, और खेलियों का संगीत द्वारा मनोरञ्जन करना था। ये गायिकाएँ केवल उन्हीं के निवास में गा सकती थीं जिनके लिए वे विशेषतया नियुक्त होती थीं। किन्तु बड़े उत्सवों के मौके पर इस नियम की पाबन्दी न की जाती थी। ऐसे अवसरों पर सब मिलकर एक साथ गा सकती थीं। ये सब गायिकाएँ,

मनुक्कि ने लिखा है, बहुत ही खूबसूरत, मजीली और नाज़भरी होती थीं। बोलने में वे बहुत ही वाचाल और अत्यन्त कामुक हुआ करती थीं। संगीत के अलावा उनका दूसरा काम केवल रतिभोग था।

राजमहल के कंचुकियों के नाम

महल में स्त्री परिचारिकाओं के अलावा पुरुष-परिचायक अथवा खोजे आदि भी हुआ करते थे। महल के विभिन्न कार्यों के लिए अलग-अलग प्रमुख खोजे होते थे। प्रमुख खोजों का बादशाह बड़ा मान करता था और उन्हें बड़ी-बड़ी तनख्वाहें देता था। खज़ाने के वे ही अध्यक्ष होते थे और उन्हीं के निर्देशों पर 'सराया' (वस्त्र) तैयार होता था। इस प्रकार से महल के सम्पूर्ण वस्त्राभूषणों के बनाने आदि का काम और महल के भीतर आने और जाने वाली चीजों की देखभाल एवं निगरानी का कार्य उन्हीं के सुपुर्द था। प्रत्येक विशेष खोजाओं को बादशाह की ओर से विशेष उपाधियाँ मिली होती थीं, जैसे—'दानिश' (विद्वान); 'दौलत' (समृद्धि); 'नीलम'; 'इनायत' (कृपा); 'हिम्मत'; 'अनवर' (सीमित); 'अमृत'; 'ख्वाजा सरा' (हरम के समाचारों का लिखने वाला); आदि।

महल के अन्दर प्रवेश चाहने वाली स्त्री की भी मनुक्कि ने लिखा है, बिना किसी बात का लिहाज किये जाँच की जाती थी, जिससे कि कोई युवा पुरुष स्त्री के वेश में महल में प्रवेश न करने पावे।

महल में काम पर आने वाले राज, मजदूर और कारीगरों के नाम और सिनाख्तें, चेहरे पर के चिह्न आदि को प्रत्येक दरवाजों पर खोजे रजिस्टर में भर लेते थे। ये रजिस्टर तब उन खोजाओं के पास भेज दिये जाते थे, जिनको काम समाप्त होने पर कारीगरों आदि को सिनाख्त के चिह्नों की जाँच करके महल के बाहर कर देना होता था। यह इस लिए किया जाता था जिससे कि कहीं ऐसा न हो कि कोई अन्दर ही रह जावे या कोई बिना राजकीय आज्ञा के किसी राज या मजदूर को बदल देवे।

राजमहल के दरवाजों पर स्त्रियाँ भी नियुक्त रहा करती थीं। ये स्त्रियाँ बहुधा काश्मीर की होती थीं और उनका काम जरूरी चीजों को बाहर ले जाना या भीतर पहुँचाना था। ये किसी से पर्दा नहीं करती थीं।

राजमहल के दरवाज़े या फाटक

महल के सदर फाटक या प्रमुख दरवाज़े सूर्यास्त होने पर बन्द कर दिये जाते थे। प्रमुख दरवाजों की रखवाली के लिए विश्वास-पात्र प्रहरी नियत रहते थे। दरवाज़ों पर मुहर लगा दी जाती थी। तमाम रात भर महल में मशालें जला करती थीं। प्रत्येक रखवाली करने वाली स्त्री के पास घड़ी रहा करती थी। दरवाजे पर एक लेखक नियत रहता था जो महल में आने-जाने वालों तथा यहाँ होने वाली अन्य घटनाओं का पूरा लिखित ब्योरा नजीर को पहुँचाया करता था।

राजमहल का व्यय

राजमहल का खर्चा एक करोड़ से कम न होता था। यद्यपि इस ख़र्चे में सरापा और उन खिल्लतों का व्यय भी शामिल था जिन्हें बादशाह अपने सेनापतियों और उच्चाधिकारियों को दिया करता था। इतना खर्च होने का एक प्रमुख कारण इत्र और सुगन्धित तैलों का प्रचुर मात्रा में इस्तेमाल किया जाना भी था। पान के ऊपर भी बहुत व्यय होता था। मनुक्कि लिखता है कि 'पान लोगों के मुँह में हर वक्त मौजूद रहता था।' इसके अलावा जवाहरातों और आभूषणों पर भी बहुत व्यय किया जाता था। गहने आदि इतने बनते थे कि सुनारों का काम रात-दिन चालू ही रहा करता था। सबसे बहुमूल्य और बेश-क़ीमती आभूषण बेगमों और शाहजादियों के हुआ करते थे।

आभूषणों का अत्यधिक शौक

शाहजादियों को गहने का ऐसा शौक था कि वे बातचीत का प्रारम्भ भी दूसरों से गहनों को लेकर ही किया करती थीं। उनके मनोरञ्जन और उल्लास के आभूषण ही प्रमुख साधन थे। दूसरों को

४

राजमहलों का जीवन (२)

राजकुमारों का जीवन

मनुकि ने लिखा है कि उसके समय में औरङ्गजेब के शाहजादा शाहआलम को सबसे अधिक तनख्वाह मिलती थी। उसकी आय लगभग २०० करोड़ रुपया थी। शाहजादा के महल में लगभग २,००० स्त्रियाँ नौकर रहा करती थीं। उसका दरबार भी अपने पिता के दरबार की तरह आलीशान और भव्य था। माँ-बाप के साथ से जब शाहजादे बड़े होकर अलग रहने लगते थे तो वे अलग से अपने निजी मित्र बनाया करते थे। वे गुप्त रूप से हिन्दू राजाओं से और मुस्लिम सेनापतियों से पत्र-व्यवहार करते थे कि यदि वे उनके तख्त नशीन होने में मददगार हुए तो वे उन्हें अच्छा इनाम और पुरस्कार देंगे। सिंहासन पर आने पर जो राजकुमार अपने किये वायदे को पूरा करता था, वह वचन का पक्का समझा जाता था।

किसी राजकुमार या शाहजादे को जब लड़का होता तो उसका नामकरण दादा ही करता था, तथा दादा ही उसका वेतन भी नियत करता था।

ये तनख्वाहें बादशाह के निजी लड़कों की तनख्वाहों से कम होती थीं। नातियों को करीब २००), ३००) रुपया प्रतिदिन मिलता था।

लड़के का पिता भी उसे कुछ वेतन अपनी ओर से दिया करता था। यह वेतन उनके विवाह होने तक दिया जाता था। विवाह के बाद उनका व्यय और वेतन आदि बढ़ा दिया जाता था।

बादशाह के लड़के बादशाहजादा, और शाहजादा के लड़के

शाहजादा कहलाते थे। शाहजादों को सुलतान की उपाधि भी दी जाती थी।

बेगमों का जीवन

शाहजादों की तरह बेगमें और शाहजादियाँ भी बहुत ही आमोद-प्रमोद का जीवन व्यतीत किया करती थीं, संसार की कोई चिन्ता या व्यथा उनको सता न पाती थी। अपनी समृद्धि, शान वा शौकत का प्रदर्शन करने के अतिरिक्त उनका कोई दूसरा काम न था। हमेशा वे अपने को सुन्दर, अनुपम और भव्य बनाने में लगी रहती थीं, जिससे सर्वत्र दुनिया में उनके रूप की चर्चा फैले और बादशाह उनसे प्रसन्न रहा करे। उनमें आपसी प्रतिस्पर्धा भी बहुत रहा करती थी, किन्तु नीति-कुशल होने से वे अपनी ईर्ष्याओं को अपने दिल में ही छिपाकर रखा करती थीं।

औरङ्गजेब का स्त्री-प्रेम

औरङ्गजेब को बहुत ही शुष्क, कठोर और नीरस व्यक्ति कहा जाता है, किन्तु तब भी उसमें नारी-सौन्दर्य का आकर्षण और रूप का मोह कम न था। मनुक्कि ने लिखा है कि "यद्यपि महल की बेगमें और शाहजादियाँ बहुत ही शान और शौकत से रहती थीं, किन्तु औरङ्गजेब उसमें कोई बुराई न समझता था।" वह आगे लिखता है "सभी मुसलमान स्त्रियों के बहुत शौकीन होते हैं। स्त्रियाँ ही उनके आमोद और आनन्द के प्रमुख साधन हुआ करती हैं। इसी प्रकार मुग़लों में भी परम्परा से आमोद-प्रमोद और ऐश-इशरत की रीति चली आती है। किन्तु वर्तमान बादशाह (औरङ्गजेब से अभिप्राय है) शाहजहाँ के बराबर शान-शौकत से नहीं रहता। उसके कपड़े बहुत साधारण होते हैं, और आभूषण भी बहुत कम धारण करता है। उसकी पगड़ी के मध्य में एक छोटा-सा पंख और अग्र-भाग पर एक बहुत बड़ा बहुमूल्य पत्थर जड़ा होता है। अपने बुज़ुर्गों की तरह वह मोतियों की मालाएँ भी नहीं धारण किया करता। उसके पहिनने का कोट या कबा

बहुत मामूली-सा होता है, जिसकी कीमत दस रुपये से अधिक नहीं होती।"

शाहजादी या शाहजादों का जन्मोत्सव

शाहजादियों के जन्म पर केवल महल की स्त्रियाँ खुशियाँ मनाती थीं। किन्तु शाहजादों के जन्मोत्सव पर पूरा दरबार ही खुशी मनाता था। यह जन्मोत्सव बादशाह के आदेशानुसार कई दिनों तक मनाया जाता था।

इन दिनों वाद्य और संगीत की धूम रहती थी। सरदार लोग बादशाह को भेंट सहित बधाई देने महल में पहुँचते थे। जन्म के रोज ही बादशाह बच्चे का नामकरण भी कर देता था, तथा उसके लिए मासिक खर्च या वेतन भी नियत कर देता था। यह रकम उतनी ही होती थी जितनी कि सेना के किसी बड़े सेनापति को दी जाती थी। बच्चे के नाम जागीर पर कुछ गाँव भी दे दिये जाते थे जिनकी देख-भाल के लिए बादशाह खुद अफसर नामजद किया करता था। राजकुमारों की आय में से जितना धन खर्च होने से बचा रहता था वह उन्हीं के नाम खजाने में अलग जमा कर दिया जाता था। वह रुपया जब राजकुमार विवाह करके अपने महल में रहने लगता तो उसे दे दिया जाता था।

सबसे बड़े राजकुमार या शाहजादे को पचास हजारी मनसबदार के बराबर तनख्वाह मिलती थी। इससे अधिक तनख्वाह और किसी को न दी जाती थी।

प्रमुख परिचारिकाओं की उपाधियाँ

महल में परिचारिकाओं का काम करने वाली कुछ स्त्रियों के नाम निम्न थे—'गुलाल' (गुलाब); 'चम्बेली'; 'गुल-इ बदाम'; (बदाम का फूल); 'कस्तूरी'; 'बेल'; 'गुल-अनार'; (अनार का फूल) 'अनारकली' (अनार की कोंपल); 'सलोनी'; 'मधुमति'; 'मेंधी'; 'कोमल'; 'ज्ञानी'; 'कोयल'; 'सन्दल'; 'दिल-अफरोज' (हृदय को सुख देने वाली); 'केतकी';

मोती'; 'अचानक'; 'कमल-नैन'; 'दिलपसन्द'; 'दिल आराम'; 'रंग-गाला' (फूलों से सजी बजी); 'वसन्ती'; 'किशमिश'; 'पिश्ता'; 'नेक क़दम'; 'नियाग-बू' (सुन्दर सुरभि); 'जिन्दा-दिल'; 'सुगन्धरा' आदि ।

इन नामों में भी बहुत से हिन्दुओं के जैसे नाम हैं । सम्भवतः ये परिचारिकाएँ ज्यादातर हिन्दू घरों वा गाँवों से भगाकर लायी गई लड़कियों में से होती थीं । उनके नाम ऐसे ही उठाकर न रखे जाते थे; मनुक्कि के अनुसार बादशाह लड़कियों के गुणों की जाँच करके उनमें जैसी सुन्दरता, चाल, नाज और शोभा पाता वैसा ही नाम उसे देता था ।

ये सब लौंडियाँ वस्त्राभूषणों से बहुत अच्छी तरह सुसज्जित रहा करती थीं । सब परिचारिकाओं को एक-सी तनख्वाहें मिला करती थीं । प्रत्येक प्रमुख परिचारिका के नीचे दस-दस लौंडियाँ होती थीं; जिन पर वे हुकूमत किया करती थीं ।

ख्वाजा या नजीर की स्थिति

महल के ख्वाजाओं या खोजों को 'नजीर' कहा करते थे, जिसका अर्थ अध्यक्ष या निरीक्षक था । बादशाह, बेगम और शाहजादियाँ आदि नजीरों का बहुत विश्वास करते थे । महल की बेगमों, राजकुमारियों आदि की दौलत और जागीर आदि के प्रबन्धक वे ही होते थे । महल के तमाम अधिकारियों, नौकरों और गुलामों को सारा हिसाब-किताब उन्हें दिखलाना पड़ता था ।

खोजों का काम और कर्तव्य

नजीर के अधीन बहुत से खोजे होते थे । कुछ खोजे महल के अन्दर आ-जा सकते थे, और संदेशों को बाहर-भीतर पहुँचाया करते थे ।

कुछ खोजे महल के फाटक पर नियत रहते थे । उनका काम महल के अन्दर आने-जाने वालों की देख-रेख करना था । अन्दर जाने वालों की वे तलाशी लिया करते थे, और किसी को महल के अन्दर भाँग, मदिरा, अफीम आदि नशीली चीजें न लाने देते थे । मनुक्कि ने लिखा है कि

महल की स्त्रियाँ नशीली चीज़ों को बहुत पसन्द किया करती थीं। राज-महल के अन्दर मूली, ककड़ी, बैंगन और इस तरह की अन्य तरकारियाँ भी नहीं आने दी जाती थीं।

शाही गुलाम और उनकी उपाधियाँ

मनुकि ने लिखा है कि मुसलमान बादशाह आदतन अपने पास कई प्रकार की जातियों के गुलाम रखा करते थे। मुग़ल बादशाह के इसी प्रकार विभिन्न जाति के ७ हजार गुलाम थे। कुछ गुलाम प्रमुख होते थे और उनके नीचे बहुत से साधारण गुलाम काम किया करते थे। प्रमुख गुलामों को विशेष उपाधियाँ मिला करती थीं। औरङ्गजेब के समय के बहुत से गुलामों को निम्न उपाधियाँ थीं—मुबारक; खुशहाल; दया; मतलब; खुर्रम (हर्ष); दिलावर (सजीव); तारा (चमकता हुआ); दौलत; नज़र-बहादुर; बख्तावर; इलायची; नेकदिल; नेक-रोज़; हाज़िर; हिलाल, (बालचक्र); मकबूल; सुजान, हातिम आदि।

ये सब गुलाम मध्य के सैनिक होते थे और उन्हें काफी अच्छी तनख्वाहें दी जाती थीं, इन ७ हजार गुलामों में से तीन हजार घुड़सवार होते थे और शेष चार हजार पैदल सैनिक। महल और दरबार से सम्बन्धित उन्हें कई एक काम करने होते थे।

महल के विद्रोह में उन्हीं से अधिक सहायता ली जाती थी। शाही फरमानों को कार्यान्वित कराने का भार उन्हीं पर होता था। गुप्तचरों के रूप में वे साधारण जनता और अमीरों के बारे की खबरें भी बादशाह को पहुँचाया करते थे।

उत्सव

बादशाहजादों और शाहजादों के जन्मोत्सव पर दरबार की प्रमुख स्त्रियों को महल में जाकर बेगमों और शाहजादियों को भेंट सहित बधाई देने को जाना पड़ता था। यह उत्सव बराबर लगभग छः से नौ दिनों तक जारी रहता था। दरबार की तमाम स्त्रियों को इन दिनों महल ही में रहना पड़ता था। केवल पठानों की स्त्रियाँ इस नियम से मुक्त थीं।

गायिकाओं और नर्त्तकियों को इन अवसरों पर गाने-बजाने तथा नाचने के उपलक्ष में बेगमों आदि से खूब भेंट मिला करती थी। मुबारक गाने, और प्रशंसा के गीत सुनाने पर प्रमुख स्त्रियाँ गायिकाओं के ऊपर सुवर्ण विखेर के अपनी खुशी प्रदर्शित किया करती थीं।

प्रौढ़ा स्त्रियों को इन अवसरों पर उपहार में खूब वस्त्र (सरापा) वा आभूषण आदि मिला करते थे, और वेतन बढ़ा दिया जाता था। महल में आई हुई सरदारों की स्त्रियों को विदा करते समय बेगमें और शाहजादियाँ, उनके हाथों को 'खिचड़ी' से (अभिप्राय मोती, बेश-कीमती पत्थर और सोने के सिक्के आदि की मिश्रित खिचड़ी से है) भर दिया करती थीं। इन प्रतिष्ठित स्त्रियों को बहुमूल्य पोशाकें (सरापा) और जवाहरात भी दिये जाते थे। शाहजादों और शाह-जादियों के जन्म-दिवस प्रति वर्ष इसी प्रकार समारोह के साथ मनाये जाते थे।

भागें कहाँ

किन्तु मनुक्कि ने प्रत्येक राज्यों की नृशंसता का हवाला देते हुए खुद ही बतलाया है कि लोग बेचारे भागें भी तो भागें कहाँ! यदि वे एक राज्य को छोड़कर दूसरे में जाकर त्राण पाने की सोचें तो वहाँ जाने पर उनको और अधिक कष्ट के बिना कुछ न मिल पायेगा, क्योंकि सभी अड़ोस-पड़ोसी राजा समान-रूप से अत्याचार किया करते हैं किन्तु तब भी बहुत से अपने देश को छोड़कर इधर-उधर त्राण की खोज में भटकते ही रहते हैं, यद्यपि उनके हाथ सिवा और कष्टों के और कुछ नहीं लग पाता। दंड से कहीं भी उनको छुटकारा नहीं मिलता।

ग्राम-रक्षक या चौकीदार

गाँव के चौकीदारों के बारे में लिखते हुए मनुक्कि ने कहा है कि "ये चौकीदार या रक्षक अपने गाँवों के 'छोटे राजा' जैसे होते हैं। ये लोग अपने गाँवों के दीवानी और फौजदारी के मामलों में खुदमुख्तियार हुआ करते हैं। उनकी हुकूमत अधिकार के बनिस्बत 'जोर' पर अधिक चलती है। गाँवों के किसान लोग इनको सालाना कुछ कर दिया करते हैं। इनका कर्तव्य है कि वे अपने अधिकृत गाँवों में चोरी न होने दें। नियम यह है कि यदि चोरी हो तो वे हर्जाना चुका दें।" किन्तु मनुक्कि आगे कहता है कि "हर्जाना दे तो कौन दे, जब कि ये चौकीदार या रक्षक स्वयं ही बड़े भारी चोर होते हैं। वे उन्हीं घरों की सब सुन्दर वस्तुएँ उठा ले जाते हैं जिनकी रक्षा का भार उन पर होता है। वे कहा करते हैं कि जो माल दिन में चोरी हुआ है उसका हर्जाना देने को वे बाध्य नहीं हैं।

रात में हुई चोरी पर वे चोर को ढूँढ़ लाने के लिए कहते हैं। यदि लोग चोर पकड़ लावें तो वे तत्काल माल दिलाने का वायदा करते हैं। कोई यदि यह कहने का साहस करता है कि जो कुछ उसके पास था चोरी चला गया और वह बड़े अफसर से जाकर इसकी शिकायत करेगा; तो ये गाँव के रक्षक कहाने वाले रात में उसको बड़ी

बुरी तरह से पीटते हैं और सब कुछ लूट-पाट कर उसे नंगा बना देते हैं; और उसे आगे के लिए चेता भी देते हैं कि यदि उसने कहीं मुँह खोला तो वे उसे उसके सारे कुटुम्बियों सहित खतम कर डालेंगे।"

मनुक्कि इन ग्राम-रक्षकों की अनुपम नृशंसता और पाशविकता की निन्दा करते हुए कहता है कि ये रक्षक बहुत ही रक्त पिपासू और नितान्त पाशविक मनुष्य हुआ करते हैं। वे तुच्छ-सी चीज़ के लिए किसी की भी हत्या कर या करवा सकते हैं। ये लोग एक दूसरे के साथ हमेशा इस प्रकार भीषण कलहों में लिप्त रहते हैं कि उनमें से किसी को मुश्किल से बीमारी (स्वाभाविक रूप से अभिप्राय है) से मरता देखा गया है।

इस प्रकार के अत्याचारों को हिन्दुस्तान में होता देखकर मनुक्कि ने ठीक ही लिखा था कि ऐसे बर्बर लोगों के बीच में, जो सब प्रकार से न्याय और शुद्ध विवेक के दुश्मन हैं, रहना असम्भव-सा है।

लड़ाई का तरीका; गुप्तता का अभाव

मनुक्कि ने बतलाया है कि दो राजाओं में आपस में युद्ध छिड़ जाने पर भी वे एक दूसरे के दर्बार में ही नहीं अपितु विरोधी सेनाओं के साथ भी अपने दूत रखे ही रहते थे। उसने भारतीय राजाओं की राज-नीति की उपमा 'आत्मा से हीन शरीर' से दी है। उसका कहना है कि रहस्य (secrecy) शासन या गवर्नमेंट की आत्मा है और इसीका उनकी राजनीत में अभाव है। दोनों विरोधी दल एक दूसरे की सारी बातों से परिचित रहते हैं। दूतों के पत्र तक खुले आम दरबार में जहाँ पर कि शत्रु के आदमी या दूत भी मौजूद होते हैं, पढ़ दिये जाते हैं।

सेना का यान

लड़ाई के लिये जाते (यान) समय, भारतीय सेनायें एक लम्बी कतार में चला करती थीं। मनुक्कि का कथन है कि संगठित टुकड़ियों में यान करते ही न थे।

डाला है, उससे तो यही लगता है कि फौजदार जो स्वयं लुटेरों से कम न थे, क्या किसी की रखवाली करते होंगे ?

मुग़ल प्रान्त

शासन के सुभीता के लिए साम्राज्य प्रान्तों, सरकारों और परगनों में बँटा हुआ था। प्रान्तों में मुख्यतः निम्न थे।

दिल्ली

दिल्ली का प्रान्त राज्य के मध्य का प्रदेश था। इस प्रान्त की राजधानी का नाम भी दिल्ली ही था। मुगल सम्राट् विशेषतः इसी नगर में रहते और दरबार किया करते थे।

मनुक्कि ने लिखा है कि "राजनगरी होते हुये भी उद्योग-धंधे यहाँ पर बहुत कम होते थे। किन्तु अनाज काफी मात्रा में पैदा होता था।"

मनुक्कि के समय में तुग़लकों की बनाई हुई नगरी का बहुत-सा भाग जिसे तुगल का बाद कहते थे वर्तमान था।

दिल्ली प्रांत के अधीन आठ सरकार और लगभग २२० परगने थे। इस प्रांत से सरकार को सालाना १ करोड़, २५ लाख और ५०,००० रु० की आमदनी थी, अथवा राज-कर प्राप्त होता था। इसकी रक्षा के लिए हर समय ५०,००० घुड़सवार सेना तैनात रहती थी!

आगरा

आगरा को अकबराबाद भी कहते थे। यह प्रांत सफेद और रेशमी वस्त्रों, जरीदार वस्त्रों, तथा स्त्रियों के इस्तेमाल की अलंकारिक वस्तुओं के लिये प्रसिद्ध था। इसके आस पास के मुल्क में नील काफी मात्रा में पैदा होता था, और बिकने को आगरा लाया जाता था। प्रान्त की राजनगरी का नाम भी आगरा ही था, जिसे अकबर ने बसाया था। इस प्रान्त की रक्षा के लिये १५,००० घुड़सवार सेना हमेशा तैयार रहती थी। मनुक्कि ने लिखा है कि 'किसानों से हर समय विद्रोह का भय रहता था और इसी लिये इतनी बड़ी सेनायें रखी जाती थीं' इससे जाहिर है कि मुगल शासन किसानों को इतना उत्पीड़ित किये हुये था कि मौका पाते ही वे

विद्रोह कर दिया करते थे। मुगलों का शासन केवल जोर और शस्त्रबल पर कायम था, और इसीलिये जहाँ उनके बल में कमी दिखलाई दी कि जनता विद्रोह कर दिया करती थी। मुगलों के पूरी तरह विनष्ट होने तक उनके और जनता के बीच में यही क्रम देखने को मिलता है।

इस प्रान्त में लगभग १४ सरकार और २६८ परगने शामिल थे— जिसकी वार्षिक आय लगभग २ करोड़, २२ लाख, ३७५० रुपये थी।

लाहौर

मनुक्कि के अनुसार लाहौर को मलिक गियास (संभवतया गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी) ने बसाया था। यह प्रान्त सूती और रेशमी वस्त्र, जरी की वस्तुओं तथा दरी आदि के निर्माण के लिये बहुत प्रसिद्ध था। धनुष और तीर तथा तलवार आदि वस्तुएँ भी वहाँ तैयार की जाती थीं, और बिक्री के लिये दिल्ली को भेज दी जाती थीं। यहाँ के लोग खूब गठीले और गौरवर्ण होते थे। वे बड़े मैत्रीपूर्ण और सहयोगी स्वभाव के होते थे। पढ़े लिखों की उनमें काफ़ी संख्या थी। पढ़े लिखे लोग 'तालिब-इ-इल्म' कहलाते थे।

इस प्रान्त के निकटवर्ती पहाड़ों में नमक खूब पैदा होता था। जमीन जरखेज़ थी। धान और गेहूँ खूब पैदा होता था। चीनी बहुत कम होती थी। पाँच नदियों के नाम पर यह प्रान्त पंजाब कहलाता है। इसकी रक्षा के लिये १२,००० घुड़सवार सेना हमेशा तैनात रहती थी। इस प्रान्त में पाँच सरकार और तीन सौ चौदह परगने शामिल थे, जिनकी वार्षिक आय २ करोड़, ३३ लाख और ५,००० रुपये थी।

अजमेर

इस प्रांत की राजधानी का नाम भी अजमेर था। यहाँ भी सुन्दर सफेद वस्त्र खूब बनाया जाता था। अनाज, दूध, घी, मक्खन और नमक काफी मात्रा में पैदा होता था। अजमेर का साम्भर प्रांत नमक की पैदावार का मुख्य स्थान था। इस प्रांत में [illegible] राणा राजपूतों

था। परसिया, अरेबिया और तुर्की तक यहाँ से कपड़ा बिकने के लिये
जाता था। नाज भी यहाँ खूब होता था। इस प्रान्त में ३ सरकार
और १०३ परगने थे, जिनकी वार्षिक आय १ करोड़ ११ लाख और
५६ हजार रुपये थी। इसकी रक्षा के लिये ६ हजार घुड़सवार-सेना रहा
करती थी।

बलगानह

यहाँ नाज बहुतायत से होता था। इसमें ४३ परगने थे, और
र्षिक आय ६८ लाख, ८५ हजार रुपये थी। इसकी रक्षा के लिए
हजार घुड़सवार सेना नियत थी।

नन्दे या नानदेर

सफेद वस्त्र तथा नाज यहाँ बहुतायत
वार्षिक आय ७२ लाख रुपये थी।
घुड़सवार नियुक्त थे।

खास

जिनकी वार्षिक आय ५७ लाख, ७ हजार और ५०० रुपये थी।

काश्मीर

यह प्रान्त ऊनी वस्त्रों के लिये बहुत प्रसिद्ध था। लकड़ी की दस्तकारी भी यहाँ अच्छी बनती थीं। फल बहुतायत से पैदा होते थे। यहाँ के आदमी गोरे रंग के होते थे। इस प्रांत में ४६ परगने थे, जिनकी वार्षिक आय २५ लाख और ५ हजार रुपये थी। इसकी रक्षा के लिये ४ हजार अश्वारोही नियत थे।

इलाहाबाद

इस प्रान्त की किसान जनता बहुधा विद्रोह किया करती थी, इस लिये यहाँ पर ८ हजार अश्वारोही हमेशा तैनात रहते थे। नाज खूब पैदा होता था। औरंगजेब के शासन के प्रथम वर्ष गंगा-जमुना में इस कदर बाढ़ आयी थी कि सारे इलाहाबाद में पानी भर गया और बहुत से आदमी डूब कर मर गये। बाढ़ में डूबने से केवल किला बचा रहा था।

औरंगाबाद

यह प्रान्त सफेद और रेशमी वस्त्रों के लिये प्रसिद्ध था। औरंगाबाद नगर की स्थापना औरंगजेब ने की थी। बीजापुर, गोल्कुण्डा और शिवाजी के राज्यों के सीमान्त पर होने से औरंगाबाद में रक्षा के लिए काफी सेना नियत रहती थी। इस प्रान्त में ८ सरकार और ७९ परगने थे। इसकी वार्षिक आय १ करोड़ ६२ लाख और ७५० रुपये थी।

बरार

यहाँ नाज बहुतायत से पैदा होता था। इसकी रक्षा के लिये ७ हजार घुड़सवार सैनिक नियत थे। इस प्रान्त में ६ सरकार और १९१ परगने थे। इसकी वार्षिक आय १ करोड़, ५२ लाख और ७५० रुपये थी।

बुरहानपुर या खानदेश

सफेद, रंगीन और छींट के वस्त्रों के लिये यह प्रान्त बहुत प्रसिद्ध

था। परसिया, अरेबिया और तुर्की तक यहाँ से कपड़ा बिकने के लिये जाता था। नाज भी यहाँ खूब होता था। इस प्रान्त में ३ सरकार और १०३ परगने थे, जिनकी वार्षिक आय १ करोड़ ११ लाख और ५६ हजार रुपये थी। इसकी रक्षा के लिये ६ हजार घुड़सवार-सेना रहा करती थी।

बलगानह

यहाँ नाज बहुतायत से होता था। इसमें ४३ परगने थे, और वार्षिक आय ६८ लाख, ८५ हजार रुपये थी। इसकी रक्षा के लिए ५ हजार घुड़सवार सेना नियत थी।

नन्दे या नानदेर

सफेद वस्त्र तथा नाज यहाँ बहुतायत से होता था। इस प्रांत की वार्षिक आय ७२ लाख रुपये थी। इसकी रक्षा के लिये ६ हजार घुड़सवार नियुक्त थे।

धाख

धाख बंगाल का सबसे बड़ा नगर और राजधानी था। यहाँ पर सफेद सूती और रेशमी वस्त्र बहुतायत से बनता था, और यूरोप तक बिक्री के लिये जाता था। यूरोप वाले यहाँ के कपड़े को बहुत पसन्द करते थे। इस नगर का शासनाधिकार, गौहाटी (आसाम) एवं आराकान के सीमान्त तक विस्तृत था। इस प्रान्त की वार्षिक आय ४ करोड़ थी। इसकी रक्षा के लिये ४० हजार घुड़सवार रहा करते थे।

उज्जैन

नाज और नमक इस प्रान्त में बहुतायत से पैदा होता था। इस प्रान्त के लिये एक प्रमुख सेनापति और १० हजार घुड़सवार-सेना रक्षार्थ रखी जाती थी।

सेनापति के पद पर कभी-कभी शाहजादों को नियुक्त किया जाता था। इसका कारण यह था कि यह प्रान्त प्रबल और शक्तिशाली राजाओं के राज्यों के बीच में पड़ता था। इसकी राजधानी का नाम भी उज्जैन था।

चीजें यहाँ आती थीं—हीरा, यवचार, फल और शराब।,

सड़कें

मुगल काल की सड़कें जैसा कि मनुक्कि ने लिखा है बहुत ही अरक्षित थीं। राह चलते लूटे जाने का भय बना रहता था।

उस समय की मशहूर सड़कें

१—मद्रास से गोलकुन्डा तक, करीब २१६ कोस लम्बी; २—गोलकुन्डा से औरंगाबाद तक, १६८ कोस के लगभग लम्बी; ३—औरंगाबाद से बुरहानपुर तक करीब ७२ लीग; ४—बुरहानपुर से सिरोंज तक, १४४ लीग; ५—आगरा से दिल्ली तक, ७६ लीग; ६—दिल्ली से सरहिन्द तक ८४ लीग; ७—सरहिन्द से लाहौर तक १०४ लीग; ८—सिन्धु से पेशावर तक ३६ लीग; ९—पेशावर से काबुल तक १४४ लीग; १०—काबुल से गज़नी तक ७२ लीग। यह सड़क औरंगजेब के समय में बर्बादी की अवस्था में थी। गज़नी से २१ लीग की दूरी पर मुगल राज्य की उत्तरी सीमा खतम हो जाती थी, और वहाँ से कन्धार की सीमा शुरू होती थी, जो तब परसिया के अधिकार में था।

अन्य सड़कें

उपरोक्त राजमार्गों के अलावा और भी बहुत से राजमार्ग थे जैसे—सूरत से बुरहानपुर तक १६८ लीग; बुरहानपुर से।आगरा तक २८८ लीग; आगरा से पहाड़ी सीमान्त तक १२० लीग, थाटा से मुल्तान तक २७८ लीग; मुल्तान से लाहौर तक १४४ लीग; लाहौर से काश्मीर तक १६० लीग!

दुर्ग या किले

मुगल बादशाहों ने सारे साम्राज्य भर में किले बनवा रखे थे, जिनमें निम्न विशेषत प्रमुख थे; (१)—दिल्ली का किला; (२)—आगरा (३)—ग्वालियर, कैदी राजकुमारों को यहीं के किले में बन्द रखा जाता था; (४)—काबुल का किला, यह परसिया और बल्ख के सीमान्त रप

था; (५)—दौलताबाद—दक्षिण में; (६)—बीजापुर; (७)—भागनगर (हैदराबाद-दक्षिण का यह पुराना नाम था); (८)—रोहतास (विहार)। इस प्रकार सारे भारतवर्ष भर में—उत्तर तथा दक्षिण को मिला कर करीब ४८० किले थे। काबुल से बंगाल तक के भीतर १०० किले थे, और सम्पूर्ण दक्षिण—बीजापुर, गोलकुन्डा और कर्नाटक में कुल मिलाकर ३८० किले थे। इन किलों के शासक विश्वस्त राजपूत, सय्यद और मुगल राज कुमारों में से नियत किये जाते थे। पठानों को, अविश्वसनीय और और षड्यंत्री समझे जाने के कारण कभी किले का शासक न बनाया जाता था।

मुगल सेना और शक्ति

मुगलों के पास ५० हजार घुड़सवार सेना हमेशा स्थित रहती थी; और करीब इतनी ही सेना रोज 'अभियान' में रहती थी! औरंगजेब के पास २० हजार राजपूतों की पैदल सेना भी थी। इनमें से १२ हजार तोपखाने के लिये, और बाकी राजमहल की सुरक्षा के लिये नियत थे। शाही सेना में बहुधा तुर्की घोड़े ही रखे जाते थे। हिन्दुस्तान के घोड़े तुर्कियों की अपेक्षा कमजोर और डरपोक होते थे। शाही घोड़ों के दक्षिण पुठों पर एक प्रकार का शाही चिह्न अंकित किया जाता था। सेना के सिपाहियों, सेनापतियों और सभी उच्चाधिकारियों को अपने पद के लिये जमानत देनी पड़ती थी। बिना जमानत के किसी को चाहे वह राजकुमार ही क्यों न हो, पद न दिया जाता था। राज्य की सम्पूर्ण घुड़सवार सेना का अधिपति 'मीर बख्शी' कहलाता था। शाही सेना के घोड़ों की जाँच वही करता था। यदि वह किसी मनसबदार के घोड़े को बूढ़ा या कमजोर पाता तो उसे बदलवा देता था।

उपसंहार

मुगलों की शान-शौकत और शक्ति का उपरोक्त विवरण से प्रतीत तो ऐसा होता है कि मुगल शक्ति औरंगजेब के समय में बहुत ही अपरिमित रही होगी। किन्तु यह केवल बाहरी टीमटाम ही थी;

और वैसे भीतर से वह ढोल की तरह पोली पड़ चु
मनुक्कि ने स्पष्ट लिखा है कि औरंगजेब के समय
भीतरी ताकत इतनी क्षीण हो चुकी थी कि "यदि उस समय यू
हजार विश्वस्त सैनिक सुयोग्य सेनापतियों के नेतृत्व में आक्र
तो वे सारे मुगल-साम्राज्य को एक छोर से दूसरे छोर तक
सरलता से महान विजेताओं का पद प्राप्त कर सकते थे। और
जब यूरोपियन हिन्दुस्तान पहुँचे तो ऐसा ही हुआ।